*Quest Journals*
*Journal of Research in Humanities and Social Science*
*Volume 4 ~ Issue 1 (2016)pp: 38-47*
*ISSN(Online):2321-9467*
*www.questjournals.org*

**Research Paper**

# स्वामी सहजानंद सरस्वती का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

डॉ० अशोक कुमार

*एसोसिएट प्रोफेसर*

*राजनितिक विज्ञान राजकीय महाविद्यालय टप्पल अलीगढ़*

स्वामी सहजानन्द सरस्वती अपने युग-धर्म के अवतार थे। वे नि:संग थे। अपने समय के पदचाप के आकुल पहचान थे। किसान विस्फोट के प्रतीक थे। किसान आंदोलन के पर्यायवाची थे। उत्कट राष्ट्रवादी थे। राष्ट्रवादी वामपंथ के अग्रणी सिद्धांतकार, सूत्रकार एवं संघर्षकार थे। ये दुर्द्धर्ष व्यक्तित्व के धनी थे। सामाजिक न्याय के प्रथम उद्घोषक थे। संगठित किसान आंदोलन के जनक एवं संचालक थे। अथक परिश्रमी थे। तेजस्वी व्यक्तित्व के स्वामी थे। वेदांत और मीमांसा के महान पंडित थे। मार्क्सवाद के ठेठ देसी संस्करण थे। ऐसे किसान क्रांतिकारी थे जिनकी वाणी में आग होती थी एवं क्रिया में विद्रोह। आडंबरविहीन थे। उत्पीड़न के खिलाफ दुर्वासा थे, परशुराम थे। स्वामी जी में खाँटी खरापन, खुरदुरापन, बेधड़कपन, बेलौसपन था। अजीब मस्ती के धनी थे। धुनी थे जो ठान लिए तो कर के ही दम लेनेवाले। लल्लो-चप्पो से जल-भुन जानेवाले थे। उनके पास दोस्त दुश्मन की एक ही पहचान थी - किसानों के प्रति उनका व्यवहार। किसानों के सवाल पर, आजादी के सवाल पर समझौताविहीन संघर्षरत योद्धा थे। ये दलितों के योद्धा संन्यासी थे। भारत के पूरे राजनीतिक क्षितिज पर यही एक अकेला, भिन्न, अलग, विशिष्ट, अलबेला व्यक्ति नजर आते हैं जिन्होंने पूरे जीवन में कभी भी असत से समझौता नहीं किया। यही कारण था कि सुभाषचंद्र बोस और योगेंद्र शुक्ला ऐसे राष्ट्रवादी क्रांतिकारी इनके चरण चूमते थे। बेनीपुरी, दिनकर, रेणु, अज्ञेय, प्रभाकर माचवे, राहुल सांकृत्यायन, नागार्जुन, मुल्कराज आनन्द, महाश्वेता देवी, उग्र, रामनरेश त्रिपाठी, मन्मथनाथ गुप्त, ए.आर. देसाई, सरदेसाई, राजनाथ पांडेय, शिवकुमार मिश्र, केशव प्रसाद शर्मा ऐसे साहित्यकार इनसे जुड़े रहे एवं अधिकांश ने इन्हें अपनी रचना के केंद्र में रखा। मगर, स्वामी जी को जितना आदर सुभाषचंद्र बोस, इंदुलाल यागनिक, यदुनन्दन शर्मा, राहुल सांकृत्यायन ने दिया उतना उन लोगों ने किसी और को नहीं दिया।

विचारणीय बात है - आखिर क्या बात थी स्वामी जी में, जिसके कारण सुभाषचंद्र बोस हृदय से यह समझते थे और कलम से अभिव्यक्त भी करते थे कि यदि कोई 1939-40 में देश में क्रांति करने की, पूरे देश में आंदोलन करने की, पूरे देश को नेतृत्व प्रदान करने की क्षमता रखता है तो वह व्यक्ति है स्वामी सहजानन्द सरस्वती। इन्हीं के नेतृत्व में आजादी का दूसरा पर्व सफलतापूर्वक लड़ा जा सकता है। सुभाषचंद्र बोस स्वामी जी को उग्र-वामपंथ का अग्रणी चिंतक एवं क्रांतिकारी धारा का पथप्रदर्शक समझते थे। (फारवर्ड ब्लाक पत्रिका, कलकत्ता, 20 अप्रैल का संपादकीय)। आइए, हम स्वामी जी के जीवन-काल-समसामयिक, घटनाक्रम-समकालीन व्यक्तित्वगण सभी पर उड़ती सी सटीक नजर डालें तभी सुभाषचंद्र बोस के हार्दिक उद्गार का रहस्य हमारी समझ में आ सकता है। सुभाषचंद्र बोस ऐसे व्यक्ति न थे जो आसानी से किसी से प्रभावित हो जाएँ अथवा इतने अधिक उच्च भाव से श्रद्धावनत हो कर किसी की अभ्यर्थना करें (1942 अगस्त का बर्लिन ब्रॉडकास्ट सहजानन्द को संबोधित)। वेदांत और

मार्क्स के बीच एवं ज्ञान और कर्म के बीच सेतु बनानेवाले स्वामी सहजानन्द का अध्ययन, मूल्यांकन विश्लेषण, व्याख्या सहज नहीं है। फिर भी पूरी परिस्थितियों पर समेकित नजर डालने से सत्य की झलक प्राप्त होने की संभावना जरूर बन सकती है। यह लेख इसी प्रयास की कड़ी है अप्रिय होने की हद तक दो टूक है। मगर सहजानन्द को इतिहास की मम्मी बना कर अथवा चुप्पी के षडयंत्र के व्याप्त आलम को तोड़ने के लिए इस पद्धति का सहारा लिया गया है और इस हेतु संदर्भ को समग्रता से टटोला गया है।

**प्रारंभिक जीवन**

स्वामी सहजानन्द सरस्वती का जन्म महाशिवरात्रि के दिन सन 1899 में हुआ था। वंश परम्परा से ये जुझौतिया ब्राह्मण थे। जुझौतिया शब्द यौधेय का अपभ्रंश है। यौधेय के गणराज्य सिकंदर की चढ़ाई के समय पंजाब में थे। इन्होंने 325 ई.पू. में सिकंदर के दाँत खट्टे किए थे। ऐसा भी खुदाई से विदित होता है कि यौधेय गण अस्त्र-शस्त्र संचालन में कुशल आयुधाजीवी ब्राह्मण थे। ब्राह्मणों के पेशागत परिवर्तन के उदाहरण वैदिक काल में परशुराम, द्रोण, कृप, अश्वत्थामा, वृत्र, रावण एवं ऐतिहासिक काल में शुंग, शातवाहन, कण्व, वाकाटक, खारवेल, भारशीव का एक अंश, बंगाल के सेन, अंग्रेजी काल में काशी की रियासत, दरभंगा, बेतिया, हथुआ, मल्हेया, सांबे, मंझवे, माँझा, बैजनाथपुर, अहियापुर, धारहरा, मनातू इत्यादि के जमींदार हैं। कालक्रम में जुझौतिया ब्राह्मण मध्य प्रदेश के जैजाक भुक्ति क्षेत्र बुंदेलखण्ड आए। ये कान्यकुब्ज ब्राह्मण (1865 की जनगणना) की एक शाखा हैं। मालवा के पठार में बसने के कारण इन्हें इलाहाबाद में मालवीय भी कहा जाता है। स्वामी के पूर्वज बुंदेलखण्ड से गाजीपुर के देवा गाँव आए एवं अपने समतुल्य ब्राह्मण की दूसरी उपजाति भूमिहार ब्राह्मणों (बाभन) से रक्त-सम्बन्ध द्वारा घुल-मिल गए। स्वामी जी का जन्म एक निम्न मध्यवर्गीय किसान परिवार में हुआ। उनका विशिष्ट मूल एवं विशिष्ट वर्गाधार उनके जीवन चरित्र को आँकने की कुंजी है। वे एकांत प्रिय, सरलचित्त, सत्यनिष्ठ, विचारक, जिज्ञासु, साधनारत, धुनी, नि:संग अनासक्त, कर्मशील, योद्धा क्रांतिकामी, सक्रिय वेदांत के मर्मज्ञ, मीमांसा के ज्ञाता, बहुपठित शास्त्रज्ञ, वर्ग-संघर्ष के पैरोकार, व्यावहारिक मार्क्सवाद के जानकार, राष्ट्रवादी-वेदांती मार्क्सवादी थे। ये सत पर अडिग रहनेवाले संत थे। कई भाषाओं के जानकार थे। इनकी असली पढ़ाई शास्त्रीय ढंग से, स्वाध्याय से और अपने खुद के जीवन-संघर्ष से जूझते हुए, सीखते हुए हुई थी। वे भारतीय अस्मिता, पुरुषार्थ के प्रतीक एवं दर्पण दोनों थे। यदि राजा राममोहन राय को उषाकाल का सूर्य, महर्षि दयानन्द को उगता हुआ सूर्य, विवेकानन्द को उदित सूर्य कहा जावे तो स्वामी सहजानन्द सरस्वती दोपहर के प्रचंड सूर्य थे। विवेकानन्द ने अद्वैत वेदांत को नई ऊँचाई दे कर भारत को बेटी बंदी, रोटी बंदी, जाति बंदी, समुद्र बंदी, हुक्काबंदी से मुक्त कराने का प्रबल उपक्रम किया था और आदर्शवाद को खींच कर भौतिकवाद के कगार पर खड़ा किया था तथा ओज, शौर्य, पराक्रम, आत्मविश्वास की चाशनी में नियतिवादी वेदांत को तर किया था। स्वामी सहजानन्द विकास के क्रम में विवेकानन्द की अगली कड़ी थे। स्वामी सहजानन्द ने वेदांत को भौतिकवाद के बीचोंबीच स्थिर किया एवं वेदांत को प्रवचन सभागार से निकाल कर जनसंघर्षों में, नित्य के सामाजिक जीवन में जी कर एवं जिला कर नए ओज एवं तेवर से अश्रुतपूर्ण अगतनुगतिक रास्ते से स्थापित किया। वे सक्रिय वेदांत एवं देशज मार्क्सवाद के प्रवक्ता एवं प्रयोगकर्ता दोनों साथ-साथ बने। इनके गीताधर्म के अन्तर्गत मार्क्स, इस्लाम, क्रिस्तान सबके लिए पर्याप्त जगह थी। इनकी गीता सार्वभौम, सार्वकालिक थी जिसमें जनहित-लोकसंग्रह के रास्ते कर्म, अकर्म, सुकर्म, विकर्म कुछ भी करते हुए पूर्णता पाई जा सकती थी। वेदांत के अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष में मार्क्स के अर्थ को पहला स्थान था, इसी कारण इन्होंने राजनीति को आर्थिक कसौटी पर कस कर कबूल

*Corresponding Author: डॉ० अशोक कुमार 

किया, जबकि दूसरे लोग राजनीति के चश्मे से आर्थिक नीति को देखते थे। स्वामी जी की क्रांति का रास्ता उग्र अर्थवाद, वर्ग-संघर्ष, किसान हित के रास्ते से तय होता था।

संन्यास

गाजीपुर के जर्मन मिशन स्कूल में प्रारंभिक शिक्षा के बाद स्वामी जी 1917 ई. में कुल अट्ठारह वर्ष की उम्र में ही संन्यासी हो गए। संन्यासी बन कर स्वामी जी ने ईश्वर और सच्चे योगी की खोज में हिमालय, विंध्यांचल, जंगल, पहाड़, गुफा की दर-दर खाक छानी पर कहीं भी न 'हरि ही मिले न विशाले सनम।' स्वामी जी योगी और ईश्वर की खोज को विराम दे कर ज्ञान यज्ञ की ओर प्रवृत हुए। काशी और दरभंगा के उद्भट विद्वानों के संग वेदांत, मीमांसा, न्याय शास्त्र का गहन अध्ययन किया। इस अध्ययन से वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि हृदय, मस्तिष्क और हाथ तीनों के बीच उचित तालमेल अर्थात श्रद्धा पर बुद्धि का, बुद्धि पर संवेदना का, विश्वास का, श्रद्धा का, पहरा जरूरी है तथा श्रद्धा और बुद्धि का शिल्प से जुड़ाव आवश्यक है। बुद्धिहीन श्रद्धा अन्ध-विश्वास में धकेल सकती है और श्रद्धाविहीन बुद्धि बेलगाम घोड़े ऐसा पटक कर हाथ-पैर तोड़ सकती है। तर्कशून्य, विवेकशून्य धर्म दैववाद में, परलोकवाद में भटका सकता है और भावनाहीन बुद्धि सहृदयता छीन सकता है, संवेदना छीन सकता है। अत: श्रद्धा, बुद्धि और श्रम तीनों मनुष्य को पूर्ण बनाने के लिए एक साथ जरूरी हैं।

**सामाजिक कार्य**

परिस्थितिवश स्वामी जी 1915 ई. में सामाजिक कार्य में पड़ गए। इस अवधि में इन्होंने पुरोहितवाद, कथावाचन के ब्राह्मण जाति के एक उपजाति के एकाधिकार के खिलाफ खड़ा होना पड़ा। स्वामी जी किसी भी प्रकार के अन्याय के खिलाफ डट जाने का स्वभाव रखते थे। गिरे हुए को उठाना अपना प्रधान कर्तव्य मानते थे। स्वामी जी ने इस क्रम में ब्रह्मर्षि वंश विस्तार, झूठा भय, मिथ्या अभिमान, ब्राह्मण समाज की स्थिति इत्यादि पुस्तकें लिखीं। सुनील कुमार चाटुर्ज्या, पंडित हजारीप्रसाद द्विवेदी, कान्यकुब्ज सभा, सर्यूपारीण सभा इत्यादि व्यक्ति और संगठन ब्रह्मर्षि वंश विस्तार में उद्घाटित तथ्यों के आलोक में स्वामी जी से अपनी सहमति जताई पर डुमराव के शाकद्वीपी-मागी ब्राह्मण रजनीकांत शास्त्री एवं उनके समर्थकों ने विरोध नहीं छोड़ा और पूजा कराना बंद कराने की धमकी दे दी। इस परिस्थिति में स्वामी जी ने खुद कथावाचन, संस्कृत अध्ययन की राय समाज को दी एवं पूजा-पाठ, शादी-ब्याह, सोलह संस्कार, नित्य कर्म, संध्यावंदन इत्यादि कर्मों हेतु अत्यन्त सरल, सुबोध, पुस्तक 'कर्मकलाप' लिख कर दे दी ताकि अपना काम खुद चला लें। 1935 ई. के आस-पास बेला के पास शिलौजा गाँव में हुए शास्त्रार्थ में सभी पुरोहितवाद को अपनी जागीर समझनेवाले जमात एवं उनके प्रमुख रजनीकांत शास्त्री की हार हुई और खुद उनकी पुरोहिती एवं जीविका खतरे में पड़ गई तब उन्होंने स्वामी जी का पैर पकड़ कर कहा -

'आप संन्यासी हैं। दयालु हैं। सब कुछ कीजिए पर पेट पर लात न मारें।'

इसके पहले स्वामी जी ने बलि के खसी के मुड़ी पुजाई में लेकर बेचने पर पंडितों को मांस की खरीद-बिक्री करनेवाला कह कर ऐसी-तैसी कर दी थी और श्रोताओं में उनसे पुरोहिती न कराने का संदेश गया। पुरोहित वर्ग ने पेट पर लात की आशंका में शीघ्र घुटने टेक दिए। इस तरह इस अध्याय का पटाक्षेप हो गया।

**राजनीति में प्रवेश**

1919 ई. में बाल गंगाधर तिलक की मृत्यु हो गई। प्रखर राष्ट्रवादी की मृत्यु से उपजी संवेदना के कारण स्वामी जी खिंच कर राजनीति में आ गए। इन्होंने तिलक स्वराज्य फंड के लिए कोष इकट्ठा करने में शिरकत की। इसी

*Corresponding Author: डॉ० अशोक कुमार

दर्म्यान असहयोग आंदोलन में जेल भी गए। जेल में त्यागी कहे जानेवाले कांग्रेसी नेताओं की विलासिता, भोगवादिता, उनके काले कारनामे प्रत्यक्ष देखने का मौका मिला एवं कांग्रेस के वैसे नेताओं के वर्ग से इनका विश्वास उठ गया। जेल से आने पर इनका संपर्क सर गणेशदत्त से हुआ। सर गणेशदत्त दानी और ऋषि तुल्य उदारचेता जमींदार राजनेता थे। स्वामी जी की लोकप्रियता के बल पर सर गणेशदत्त बिहार में डॉ. राजेंद्र प्रसाद के विरोध के बावजूद चुनाव में सफल रहे। ये अंग्रेजों के अधीन लोकल बोर्ड के मन्त्री भी बने। इन्होंने स्वामी जी को बिहटा के सीताराम आश्रम में टिकाया एवं अपने पैसे से आश्रम में अध्ययन, पूजा, भजन, ध्यान का समुचित प्रबंध किया। सर गणेशदत्त जमींदार ब्राह्मणों का प्रतिनिधित्व करते थे। परिस्थितिवंश स्वामी जी खेतिहर ब्राह्मणों के बीच नायक की छवि रख रहे थे। भूमिहार ब्राह्मण महासभा में जमींदार एवं गरीब किसान ब्राह्मणों के हित टकराने लगे एवं स्वामी छोटबभना के पक्ष में दृढ़ता से खड़े हो गए। बड़बभना लोग ही जाति सभा का खर्च जुटाते थे मगर वे अल्पमत में थे। इस परिस्थिति में यह महासभा टूट कर समाप्त हो गई। इस छोटबभना और बड़बभना के संघर्ष के अंदर किसान-जमींदार संघर्ष के बीज अन्तरवस्तु में छिपे थे जो बाद में चल कर पुष्पित-पल्लवित हो कर प्रबल किसान संघर्ष में दृष्टिगत हुआ।

भारत में राजनीति का जन्म पूर्व में भी सामाजिक आंदोलन की कोख से ही हुआ करता था। मराठा, जाट, कूका, सिक्ख, अनुशीलन समिति सभी विद्रोहों का जन्म सामाजिक चेतना के विकास के साथ ही संभव हुआ। हाल में गांधी, पटेल, अरविंद, तिलक सभी सामाजिक आंदोलन से ही केंद्रीय राजनीति में आए थे। आज भी झारखण्ड मुक्ति आंदोलन, टिकैत के नेतृत्व का किसान आंदोलन सभी की कोख सामाजिक आंदोलन ही है। यह कहा जा सकता है कि भारत में राजनीतिक संघर्ष की पूर्व पीठिका सामाजिक आंदोलन ही है। स्वामी जी का राजनीतिक प्रादुर्भाव भी इसी क्रम से हुआ और यह रास्ता भविष्य के राजनीतिक आंदोलनों की सफलता की एक पूर्व शर्त एवं पथ फाइंडर है।

**किसान सभा का जन्म**

1927 ई. में स्वामी जी ने पश्चिमी किसान सभा की नींव रखी। स्वामी जी के मन से दु:खियों, शोषितों को छोड़ मुक्ति की कामना जाती रही। स्वामी जी ने 'मेरा जीवन संघर्ष' में लिखा है -

'मुनि लोग तो स्वामी बन के अपनी ही मुक्ति के लिए एकांतवास करते हैं। लेकिन, मैं ऐसा हर्गिज नहीं कर सकता। सभी दु:खियों को छोड़ मुझे सिर्फ अपनी मुक्ति नहीं चाहिए। मैं तो इन्हीं के साथ रहूँगा और मरूँगा-जीऊँगा।'

सोनपुर मेले के अवसर पर 1929 ई. में बिहार प्रान्तीय किसान सभा की नींव रखी गई। स्वामी सहजानन्द इसके अध्यक्ष एवं डॉ. श्रीकृष्ण सिंह इसके सचिव बनाए गए। इस कार्य में रामदयालु बाबू एवं यमुना कार्यी जी स्वामी जी के प्रमुख सहयोगी थे। इसके पूर्व चार किसान संघर्ष बड़े ही उल्लेखनीय हैं।

**गांधी का किसान-संघर्ष बनाम सहजानन्द का किसान-संघर्ष**

यह महात्मा गांधी द्वारा 1917 ई. में चलाया गया। महात्मा गांधी को चंपारन खोंदर राय जमींदार एवं राजकुमार शुक्ला सूदखोर बुला कर लाए थे। गांधी जी का मुद्दा 20 वर्ग मील जमीन में नील की हो रही खेती में अंग्रेज निलहे द्वारा बढ़े हुए कर में मामूली राहत था, पर जनता की जरूरत निलहों को बसानेवाले दो हजार वर्ग मील जमीन पर राज करनेवाले बेतिया राज के खिलाफ उसके शोषण के विरुद्ध संघर्ष की थी। गांधी जी जमींदार वर्ग के खिलाफ लड़ने को कतई तैयार नहीं थे और अंग्रेजों से भी ससम्मान सहयोग के इच्छुक थे, अत: संघर्ष की सीमा थी। इस परिस्थिति में अंग्रेजों से गांधी जी का 'ससम्मान समझौता' शीघ्र संपन्न हो गया। नकली नील के कारखाना में बनने से यह मुद्दा स्वत: समाप्त हो गया। हलचल खड़ा कर गांधी जी रंगमंच से विदा हो गए पर जनता साम्राज्यवाद के

*Corresponding Author: डॉ० अशोक कुमार 

साथ-साथ सामंतवाद के विरुद्ध जोर आजमाने को मचलने लगी। दूसरा संघर्ष राँची में जतरा उराँव के नेतृत्व में ताना भगतों का 1914 ई. में हुआ। इस वैष्णववादी सामाजिक आंदोलन से गांधी जी काफी सीखे और बाद के समय में उनका यह शराबबंदी, अहिंसक आंदोलन गांधी जी का रहबर बना। तीसरा आंदोलन चंपारन के खेड़ा जिला एवं बारडोली जिला में क्रमश: 1922 ई. एवं 1928 ई. में हुआ। गांधी पटेल जमींदारों द्वारा शुरू किया गया पर यहाँ भी आंदोलन पटेल जमींदारों के हाथ से फिसल कर रानी परजा, दुबला, हाली इत्यादि गरीब जातियों के हाथ में जाने लगा तब यहाँ भी ससम्मानजनक समझौता कर किसानों को बेहाल ही छोड़ दिया गया। पटेल पट्टीदार की कुछ माँगें मंजूर की गईं। इस आंदोलन में गांधी जी का दृष्टिकोण इस तरह प्रकट हुआ। 'कांग्रेस इकाइयाँ रैयत को यह जानकारी दें कि जमींदार का लगान रोकना कांग्रेस के प्रस्तावों के विरुद्ध है तथा यह राष्ट्र के हितों के लिए अत्यधिक हानिप्रद है।'

गांधी जी ने इन अनुभवों से यह निष्कर्ष निकाला कि किसानों को एक हद से अधिक आंदोलनरत रखना कांग्रेस एवं इसके संचालक जमींदार वर्ग, बाबू वर्ग के हित के प्रतिकूल है और बारडोली के बाद आजीवन गांधी, पटेल, बाबू राजेंद्र प्रसाद ने कभी भी भूल कर भी किसान आंदोलन का नाम न लिया और न यह सुनना उन्हें अच्छा लगा। इसी कारण से चौरी-चौरा में हिंसा का बहाना ले कर गांधी जी अपना असहयोग आंदोलन ठप्प कर रचनात्मक काम के नाम पर आश्रम में आराम फरमा रहे थे। आंदोलन के लंबा खिंचने पर मुमकिन था कि जनवर्ग से ही नेतृत्व पैदा हो जाता। यह खतरा भारत का बाबू वर्ग नहीं उठा सकता था। नतीजा असहयोग की समाप्ति की घोषणा में हुआ। असहयोग और सत्याग्रह प्रखर राष्ट्रवादी तिलक के हथियार थे जो अब मुलायम, गांधी द्वारा सीमित तौर पर प्रयुक्त किया जा रहा था। धर्म के माध्यम से, सामाजिक कार्य के माध्यम से, पत्राकारिता के माध्यम से राजनीति गरमाने का गुर पूर्व में तिलक आजमा चुके थे। समाजवाद की अवधारणा आने के पूर्व कांग्रेस का संचालन 1935 ई. तक तिलक के 'राष्ट्रवाद' की अवधारणा के तहत जारी था। गांधीवाद तिलक के विपरीत संविधानवादी गोखले, मोतीलाल नेहरू की विचारधारा से उद्‌भूत हुआ था जिसके हथियार केवल तिलक से लिए गए थे। गांधी ने बोअर युद्ध में अफ्रीका में एवं प्रथम विश्वयुद्ध में अंग्रेजों का साथ दे कर अंग्रेजों से इनाम में क्रॉस खिल्लत, शाबाशी प्राप्त की थी। गांधी जी ने 'भारत ग्राम सभाओं का देश है' अवधारणा हैनरी मन से प्राप्त की थी। गांधी जी ने तिलक के सक्रिय सत्याग्रह की जगह 'अक्रिय सत्याग्रह' की अवधारणा टालस्टाय के साहित्य से अपने यूरोप प्रवास में प्राप्त की थी। 'सर्वोदय' का सिद्धांत रस्किन से लिया गया था। अहिंसा का मत ईसाई ग्रन्थ बाइबिल से लिया। यह समझ बौद्धों की अहिंसा से भिन्न है। बौद्धों की अहिंसा में भाईचारा, करुणा और सामाजिक न्याय की गूँज है। ईसाइयों की अहिंसा लक्ष्य के लिए हथियार है। गांधी ने भी वैचारिक हिंसा से कभी परहेज नहीं किया मामला चाहे कस्तूरबा के उत्पीड़न का हो, नेहरू की नामजदगी का हो, सहजानन्द, सुभाष के निष्कासन का हो, मोहानी के सर फोड़ने का हो (कानपुर अधिवेशन), पाकिस्तान से 1947 में युद्ध का हो, 1947 में बँटवारे से संबंधित हिंसा का हो, गांधी जी अहिंसा से कभी चिपके नहीं रहे। अंदर एक डिक्टेटर का निवास था जो सत्ता की जिम्मेवारी दूसरे पर डालता था पर सूत्र-संचालन कभी भी फिसलने नहीं देता था।

स्वराज्य पार्टीवाले हाउस में जा कर कुछ नहीं कर पाए। कांग्रेसवाले चौरी-चौरा के बाद किंकर्तव्यविमूढ़ थे। क्रांतिकारी राष्ट्रवादी आतंकी कार्रवाइयों से मोहभंग में थे। बिस्मिल की आत्मकथा, भगत सिंह के दस्तावेज इस बात के लिए प्रमाण हैं कि वे हलचल के स्तर को किसान-मजदूर आंदोलन की ऊँचाई पर ले जाने की तमन्ना लेकर ही फाँसी पर झूल गए। भगत सिंह का अन्त निष्कर्ष स्वामी सहजानन्द का प्रस्थान बिंदु का प्रारंभिक चरण साबित हुआ। बिहार का किसान दानाबंदी, भावली, बेगारी, डोला, बकाश्त बेदखली, ऋणग्रस्तता, मंदी के असर से सस्ती से बेहाल था। इस भौतिक परिस्थिति में जहाँ चारों ओर तमस पसरा हुआ था, स्वामी सहजानन्द का किसान आंदोलन राष्ट्रीय

*Corresponding Author: डॉ० अशोक कुमार 

आंदोलन में नया खून, नया आवेग देकर नई आशा का संचार करनेवाला साबित हुआ। अब, कांग्रेस की पहचान किसान आंदोलनों से ही होने लगी और राष्ट्रीय राजनीति के केंद्र में आने के लिए माध्यम बना कर विदेश पढ़े बाबू वर्ग ने भी दिलचस्पी लेना शुरू किया। इस क्रम में नेहरू, जयप्रकाश, लोहिया, एन.जी. रंगा सभी सहजानन्द जी के संपर्क में आने लगे। स्वामी जी ने अपनी आत्मकथा में लिखा है –

'जिसका हक छीना जावे या छिन गया हो उसे तैयार कर के उसका हक उसे वापस दिलाना, यही तो मेरे विचार से आजादी की लड़ाई तथा असली समाज सेवा का रहस्य है।' सहजानन्द का सामंत-विरोधी संघर्ष ही आजादी की असली लड़ाई अन्ततः साबित ठहरी।

**रचनात्मक काम का रहस्य**

डॉ. राजेंद्र प्रसाद डालमिया के बिहटा चीनी मील के डायरेक्टर थे। मील की स्थापना के पूर्व उन्होंने वचन दिया था कि अंग्रेजों की तुलना में मेरी देशी मील ज्यादा ऊख का दाम किसानों को देगा पर मील खुल जाने पर हुआ उल्टा। वे आधे दाम देकर ही किसानों को ठगने पर तुल गए। स्वामी जी ने मजदूर नेता अनिल मित्रा को बिहटा किसान फ्रंट पर रख किसान नेता श्यामनन्दन सिंह को मजदूर फ्रंट पर लगा कर एक साथ संश्रय से किसान-मजदूर सफल हड़ताल करवा कर डालमिया और राजेंद्र प्रसाद की हेंकड़ी गुम कर दी। डालमिया स्वामी जी के पास बड़ा विद्यापीठ बनाने का खर्च उठाने का लालच भरा प्रस्ताव ले कर खुद आया। स्वामी जी ने डंडा ले कर उसे खदेड़ा। स्वामी जी की समझ में अब रचनात्मक काम का रहस्य समझ में आ गया। सेठ किसानों के शोषण से जो एक बाल्टी खून पीता है, उसमें से एक गिलास वापस नेताओं को चंदा, आश्रम, खादी संघ, चरखा संघ, इत्यादि हेतु लौटा देता है। इसी पैसे से पुरुषोत्तम दास सेठ अपना काम वल्लभ भाई पटेल द्वारा घनश्याम दास सेठ अपना काम गांधी द्वारा टाटा सेठ अपना काम नेहरू द्वारा निकाल लेते थे। गांधी के प्रभाव से अंग्रेजों से ठेका पाकर भारी मुनाफा का एक हिस्सा सेठ अपने चहेते नेताओं को देते थे। जिससे नेता अपनी राजनीति करते थे एवं मीडिया में शोहरत पाते थे। स्वामी जी ने एक ओर ऐसे ही प्रसंग में कहा – 'मैं ऐसे पैसे पर पेशाब करता हूँ।' (मेरा जीवन संघर्ष)

**गांधीवाद से मोहभंग**

1934 के भूकंप में उत्तर बिहार के लोगों की भारी तबाही हुई। दरभंगा जिला के आस-पास इलाके में महाराजाधिराज कामेश्वर नारायण सिंह द्विज राज का शासन था। उनके प्रधानमन्त्री गिरींद्र मोहन मिश्र कांग्रेस के थैलीशाह एवं महत्वपूर्ण व्यक्ति थे। दरभंगा राज के अमले उस भारी विपत्ति में भी किसानों की नोच-खसोट जारी रखे हुए थे। स्वामी जी ने गांधी जी से यह छीना-झपटी, उत्पीड़न बंद करने को कहा। गांधी जी का जमींदार के पक्ष का उत्तर सुन कर स्वामी जी अवाक रह गए और उनका झटके से मोहभंग हो गया। गांधी की विचारधारा से, गांधी के तौर-तरीके से स्वामी जी को नफरत हो गई। समस्या के निदान के लिए गांधीवाद को स्वामी जी ने न केवल नाकाफी समझा बल्कि प्रतिलोम में पाया। स्वामी जी इस तरह गांधीवाद की लक्ष्मण रेखा के पार चले गए।

**जाति सभा गठन का रहस्य**

इसी अवधि में कलकत्ता की एक जातीय पत्रिका 'भूमिहार ब्राह्मण' के संपादक ने स्वामी जी से एक लेख माँगा। स्वामी जी का लंबा लेख किश्तों में पत्रिका में छपा। लेख की विषय-वस्तु पढ़ कर संपादक जी आठ-आठ आँसू रोए, पर उन्होंने हार कर लेख को छापा। यह लेख बाद में 'किसानों के फँसाने की तैयारियाँ' नाम से अलग पुस्तिका के

*Corresponding Author: डॉ० अशोक कुमार

रूप में छापा गया। प्रथम बार यह 1935 ई. में ही पत्रिका में छापा गया। लेख में स्वामी जी ने लिखा था। उसका आशय यह है -जमींदार जातीय सभा बना कर किसान की चेतना को तोड़ते हैं, उन्हें विभक्त करते हैं, उन्हें फँसाते हैं, जातीय सभा के संचालक की भक्ति ब्रिटिश ताज और झंडे के प्रति होती है। जनता को चाहिए कि इनसे वे सावधान रहें। साम्राज्यवाद को टिकाने वाली चीज भारत में जमींदारी है। यही पाया है कि जिस पर ब्रितानी सरकार टिकी है। यही जमींदार जातीय सभाओं के संरक्षक हैं।
स्वामी जी कांग्रेसियों की चरित्रहीनता, कर्तव्यहीनता, अंग्रेजों से उनकी मिली-भगत अपने जेल प्रवास में पूर्व में देख चुके थे।

**गांधीवाद की कमियाँ**

गांधीवाद के अन्तर्गत लूट और हिंसा से प्राप्त दौलत के क्षेत्र में कानून के प्रवेश की गुंजाइश नहीं थी। गांधी की अहिंसा नीति से जमींदार-मालदार बाबू वर्ग की सदियों से लूटी दौलत की सुरक्षा निश्चित हो जाती थी। ब्रितानी साम्राज्य भी गांधी की अहिंसा से ला एवं आर्डर की समस्या से मुक्ति पाकर चैन की नींद सोता था। गांधी के प्रति अंग्रेजों की हमदर्दी का राज यही है। गांधी को जेल देकर अंग्रेज गांधी का रुतबा जनता में कायम रखते थे ताकि जनता भ्रम में पड़ी रहे। जेल भी आगा खाँ ऐसे अरबपति की महल में पत्नी कस्तूरबा, सचिव महादेव देसाई, नौकर-चाकर, अमला बराहिल के साथ होता था जिससे निजी सहूलियत बाधित न हो। ट्रस्टीशिप के सिद्धांत से सेठ की मनमर्जी बनी रहती थी। त्याग के नाम पर मनपसंद प्रायोजित नेता को चंदा दे कर उससे लाभ कमा कर 'अपरिग्रह' पर्व का पालन हो जाता था। धर्म के माध्यम से राजनीति करने से सांप्रदायिक उन्माद अग्रगति प्राप्त करता था। औपनिवेशिक स्वराज्य की माँग भारत के स्वावलंबन एवं पूँजी के स्वतन्त्रता विकास की गति को अवरुद्ध करती थी। सामंती उत्पादन प्रणाली की बरकरारगी एवं विज्ञान के निषेध से बंगाल की भंयकर भुखमरी से निपटने का कोई उपाय नहीं था। गांधी की जमींदारपरस्ती और अहिंसा की नीति से बंगाल के अकाल के समय अनाज रहते वितरण न होने से चालीस लाख व्यक्ति भूख से मर गए। पूँजी के विकास की संरचना खड़ा करने की कोई बात गांधीवाद में न थी। गांधी ने छुआछूत से इनकार किया पर छुआछूत के पैदा करनेवाले डायनेमो वर्णाश्रम को कबूल किया। गांधी के मन्दिर प्रवेश आंदोलन ने पुरोहित वर्ग के धर्म साम्राज्य को विस्तारित ही किया। नारी को परम्परागत गृहिणी बनने का उपदेश देकर गांधीवाद ने लिंगभेद को कायम रखा। भारत में वर्ग की जगह जाति राजनीति की नींव गांधीवाद ने डाली। यह भस्मासुर आज पूरे फार्म में है। गांधी ने गाँव बनाम शहर मुद्दा बना कर गाँव के कुलक सामंत तबके को संरक्षण दिया। गांधीवाद अर्थव्यवस्था को पिछड़ेपन की ओर वापस धकेलती थी। विज्ञान के अभाव में आज सोवियत संघ बिखर गया, कल्पना की जा सकती है भारत ने गांधीवाद अपनाया होता तो सौ करोड़ की आबादी की क्या गत बनी होती? लठ, कुड़ी से क्या पंजाब में हरित क्रांति आती? और यदि भाखड़ा, नांगल, बाँध न होता, हरित क्रांति न होती तो 1947 की तुलना में आज तिगुनी हुई आबादी भूख से तड़पड़ा कर मर जाती। गांधी की संविधान सभा में जनता द्वारा चुना गया कोई व्यक्ति न था। बँटवारे का प्रस्ताव महासमिति में गांधी के हस्तक्षेप एवं भाषण से ही किसी तरह पास हो सका। गांधी ने महासमिति में बँटवारे का खुल कर समर्थन किया। संविधान सभा का अध्यक्ष 'लार्ड' था एवं ड्राफ्ट कमेटी में 'सर' लोग भरे थे। यह था गांधी का गाँव प्रेम जिसमें गाँव की आम जनता को वोट का अधिकार ही नहीं था संविधान बनाने में। गांधीवाद में रोजगार गारंटी गायब है पर बेइंतहा मुनाफा पर जरा भी रोक नहीं है। गांधी पैदा हुए दौलत पर दौलतमंदों के साथ थे, नई दौलत पैदा करने की पुरानी प्रविधि से दौलत उत्पादन को ही खर्चीला, अपर्याप्त उत्पादन द्वारा बाधित कर रहे थे।

*Corresponding Author: डॉ० अशोक कुमार 

स्वाभाविक था कि तिलकवाद 1935 तक कांग्रेस की चालक विचारधारा बनी रही इसके बाद समाजवाद ने चालक विचारधारा का स्थान ले लिया।

**समाजवादी पार्टी की स्थापना**

स्वामी सहजानन्द सरस्वती गांधीवाद को अपर्याप्त, नाकाफी और नाकारा समझ कर चुप नहीं रह गए। उन्होंने सवाल किया - 'स्वराज्य' का असली मतलब क्या है? किसका स्वराज्य? जमींदार का या किसान का? पूँजीपति का या मजदूर का? बाघ का या हिरण का? बिल्ली का या चूहे का? एक का स्वराज्य दूसरे का यमराज हो जावेगा। जब समाज विविध वर्गों में बँटा हुआ है एवं उनके हित समरूप नहीं हैं तब एक को मिली आजादी दूसरे के लिए शामत की घंटी साबित होगी। सुभाषचंद्र बोस ने सवाल को दूसरी तरह से किया। पूर्ण आजादी या डोमिनियन आजादी। गांधी डोमिनियन आजादी यानी आधी आजादी की माँग कर ही संतोष कर लेते थे। नेहरू 1929-30 के लाहौर अधिवेशन में पूर्ण आजादी की माँग के समर्थन में आए पर 1930-31 के कराची अधिवेशन में गांधी पटेल गुट के दबाव में फिर औपनिवेशिक स्वराज्य की माँग में सिमट गए। स्वामी सहजानन्द का सवाल था - किसकी आजादी? सुभाष का सवाल था - कैसी आजादी? सुभाष-सहजानन्द की जोड़ी मिल कर सामंत-साम्राज्य विरोधी मोर्चा अपने उग्र तेवर के साथ मुकम्मल हो जाता था। यह वैकल्पिक राष्ट्रवाद की धारा थी। यह सवाल्टर्न धारा नहीं थी। यहाँ राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य काम कर रहा था। भारत के आजादी के संघर्ष में गांधी और गांधीवाद के समझौता-मूलक लाइन ने, जमींदार परस्त नीति ने, पूँजीपति पर निर्भर राजनीतिक कार्रवाई ने जनता को गांधीवाद से विमुख कर 'समाजवाद' का मार्ग प्रशस्त कर दिया।

समाजवादी पार्टी की स्थापना बिहार में स्वामी सहजानन्द सरस्वती के सहयोगी राहुल सांकृत्यायन, रामवृक्ष बेनीपुरी एवं क्रांतिकारी राष्ट्रवादी बसावन सिंह द्वारा 1931 में ही हो गई थी। अंजुमन इस्लामिया हाल पटना में 1934 में सम्मेलन किया गया। विदेश से पढ़ कर आए जयप्रकाश नारायण इसमें शरीक हुए। इस पार्टी ने भगत सिंह की हत्या से खिन्न युवकों को अपनी तरफ आकर्षित किया। इसमें जयप्रकाश, नरेंद्र देव, अशोक मेहता शरीक हुए। आचार्य नरेंद्र देव पर राष्ट्रवाद, मार्क्सवाद और खुशहाल किसान वर्ग का प्रभाव था। संपूर्णानन्द और अच्युत पटवर्धन पर वेदांती समाजवाद का प्रभाव था जो सदैव इन लोगों द्वारा अस्पष्ट अपरिभाषित ही रखा गया। लोहिया पर हिटलर और गांधी का प्रभाव था। इस पार्टी में नेहरू-सुभाष शरीक नहीं हुए। स्वामी सहजानन्द के सहयोगी कार्यानन्द शर्मा, किशोरी प्रसन्न सिंह, गंगा शरण सिंह, पंडित रामनन्दन मिश्रा, बसावन सिंह इत्यादि इसमें शरीक हुए पर स्वामी जी इसमें शरीक नहीं हुए। वर्ग-संघर्ष के मामले पर स्वामी जी इन्हें साथ रखने के पक्षधर थे। 1938 के कोमिल्ला अधिवेशन के बाद से स्वामी जी का इनसे मतभेद प्रारंभ हो गया जो 1941 के डुमराँव अधिवेशन में फरवरी में अलगाव में अन्त हुआ।

स्वामी जी के पास अतीत के अनुभव, वर्तमान का संकल्प और भविष्य की आशा थी। इसी पूँजी पर स्वामी जी ने समय के द्वार पर थपथपी दी। स्वामी जी को कछुआ चाल पसंद नहीं थी। वे तीव्रता, ऊर्जस्विता, तेजस्विता, आकुलता के मूर्तिमान रूप थे जो किसी भी अन्याय का मुँहतोड़ जवाब दिए बिना चैन से बैठनेवाला न था। उनकी प्रतिबद्धता पक्की थी, आक्रामकता टक्करदार थी। जब गांधी अपने ट्रस्टीशिप द्वारा क्रांति को गूँगा और अहिंसा द्वारा बहरा करने का काम जारी रखते थे तब स्वामी जी क्रांति को वर्ग-संघर्ष की वाणी दे कर और पूर्ण आजादी का श्रवण दे कर चलायमान, दोलायमान कर प्रकंपित, जलजला बना देते थे।

*Corresponding Author: डॉ० अशोक कुमार 

**अखिल भारतीय किसान सभा का गठन**

17 नवंबर 1929 को गठित बिहार प्रान्तीय किसान सभा का रूप विस्तारित हो कर 11 अप्रैल 1936 में अखिल भारतीय किसान सभा के रूप में पुनर्गठित हुआ। इसके गठन में पंडित यदुनन्दन शर्मा, कार्यानन्द शर्मा, मोहन लाल गौतम, पुरुषोत्तम दास टंडन, इंदुलाल यागनिक, कमलादेवी चट्टोपाध्याय, जयप्रकाश, करम सिंह मान, निहारेंद्र दत्त मजूमदार, कमल सरकार, सुधीन प्रामाणिक, आचार्य नरेंद्र देव, एन.जी. रंगा का हाथ रहा। बिहटा का सीताराम आश्रम, नियामतपुर (गया) का यदुनन्दन शर्मा का आश्रम इस संघर्ष का केंद्र बना। दिल्ली से प्रकाशित अंग्रेजी बुलेटिन 'किसान बुलेटिन' के संपादक इंदुलाल यागनिक हुए। इस सभा ने अपने लाल झंडे के बैनर तले शानदार लड़ाइयाँ लड़ीं जिसमें टेकारी, मंझियावाँ, भोरी, रेवड़ा, बड़हिया टाल, अमवारी, पंडौल, देकुसी, इत्यादि प्रसिद्ध हैं। स्वामी सहजानन्द और इंदुलाल यागनिक ने गुजरात में गरीब किसान जातियाँ रानी परजा-दुबला-हाली इत्यादि को संगठित कर पटेल की चुनौती को सर कर एक लाख किसान वालंटियर का जुलूस परेड कर निकाल हरिपुरा कांग्रेस के समय पटेल की साख धूल में मिला दी। पटेल ने विषय समिति में स्वामी को 'डर्टी स्वामी' कहा जिस पर तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष सुभाष की डाँट उन्हें खानी पड़ी। अन्यत्र स्वामी जी को टेरिबुल (भयंकर) स्वामी कह कर संबोधित किया। किसान सभा को नेहरू का नैतिक समर्थन प्राप्त था पर जब नियामतपुर की बैठक में किसान सभा का झंडा लाल तय हुआ तब नेहरू किनारा कर गए। समाजवाद के नायक बन कर नेहरू 1936-37 में कांग्रेस अध्यक्ष बने थे पर गांधी की भावना का एवं अपने राजनीतिक कैरियर का ध्यान नेहरू को हमेशा रहा जो गांधी की सदस्यता पर ही टिकी हुई थी। नेहरू ने किसान सभा का इस्तेमाल पटेल ग्रुप को दबाने में किया पर गांधी से टकराने का आत्मविश्वास नेहरू में नहीं था। पटेल को दबाने में जयप्रकाश नेहरू के हथियार खुशी-खुशी बन जाते थे। स्वामी जी ने जयप्रकाश नारायण को यदुनन्दन शर्मा के आश्रम में रख कर वर्ग-संघर्ष की व्यावहारिक शिक्षा दी। जयप्रकाश नारायण को गया जिला कांग्रेस कमेटी का अध्यक्ष बनवाया और अखिल भारतीय कांग्रेस का महासचिव बना कर गया से ही भेजा। जयप्रकाश पर मार्क्सवादी का ठप्पा उस समय था एवं छपरा जिला से राजनीति राजेंद्र प्रसाद की चलती में चलाना जयप्रकाश के लिए दुष्कर था। जयप्रकाश ने इस समय पुस्तक लिखी थी - 'समाजवाद क्यों?' इसमें गांधी और गांधीवाद को चुन-चुन कर गालियाँ दी गई है पर 1939 के त्रिपुरी अधिवेशन के बाद जयप्रकाश नारायण ने कायाकल्प कर गांधी का खेमा पकड़ लिया। जयप्रकाश नारायण 1936 ई. में विहपुर प्रान्तीय किसान सभा के अध्यक्ष चुने गए थे। यह चौथा सम्मेलन था। 1939 ई. में नवादा जिला के रेवड़ा गाँव में सांबे स्टेट के जमींदार रामेश्वर बाबू के खिलाफ चलाए गए सफल किसान संघर्ष में पंडित यदुनन्दन शर्मा के मातहत सबसे बड़े नेता जयप्रकाश ही थे जिसमें बसावन सिंह भी शिरकत किए थे। 1938 ई. में मसौढ़ी, बिहार शरीफ बड़हिया की किसान सभा में स्वामी जी के साथ लोहिया भी घूमते थे पर आश्चर्य की बात यह है कि किसी भी जीवनीकार ने इन सारे प्रसंगों की चर्चा तक नहीं की है। समाजवादियों की किसान सभा संगठित करने में बड़ी अच्छी भूमिका रही है, पर इन लोगों ने अपने वर्ग-संघर्ष में शरीकदारी के अतीत को इतिहास से हटा दिया है। जयप्रकाश नारायण बाद में बिरला के नियमित पेरोल पर एवं गोयनका के अनियमित पेरोल पर आ गए और लोहिया के थैलीशाह जमना लाल बजाज तथा चार मिनार सिगरेट के मालिक बद्री विशाल पित्ती थे। लोहिया ने अपने 'विभाजन के गुनहगार' पुस्तक में जयप्रकाश को नेहरू का एजेंट कहा, नागार्जुन ने सागर के भाषण में जयप्रकाश को नेपाल के राणा से कोइराला के संघर्ष को शिथिल करने के लिए पैसा लेने का आरोप लगाया है। विभाजन के गुनहगार में बँटवारा के प्रस्ताव को पास कराने में सहयोग के लिए अपने बड़े भाई जयप्रकाश को दोषी करार दिया है एवं अपने को जयप्रकाश का छोटा भाई कह कर, अनुयायी कह कर अपना कलंक धो लिया। नागार्जुन सागर के भाषण में राणा से स्वयं पैसा लेने की बात, उद्देश्य की जानकारी न रहने के कारण

कबूल की है। अन्य जमनालाल बजाज द्वारा पैसा ऑफर की चर्चा है। बेनीपुरी ने जयप्रकाश को अपने विरोधी दानी सर गणेशदत्त के घर जा कर पैसा प्राप्त करने की चर्चा की है (मुझे याद है)। अन्य बातें रामनाथ गोयनका की पुस्तक जयप्रकाश और बिरला की लिखी किताब में ब्यौरेवार हैं।

सवाल उठता है सेठ आखिर समाजवादियों को पैसा क्यों देते थे? भारत का पूँजीवाद नवोदित एवं कमजोर था। दौलत सामंतों के हाथ थी। सामंत स्वेच्छाचारी थे। उनके प्रभाव में रहते पूँजी का विकास संभव न था। इस हेतु उन्हें हटाना जरूरी था। दूसरे, जब जमींदारी-रजवाड़ी उन्मूलित हो जाती तभी सामंत अपनी जीविका के नए स्रोत हेतु अपनी दौलत बाजार में शेयर या ऋण के रूप में उतारते। सामंतों को कमजोर करने में सेठ अकेले सक्षम नहीं थे। इस कार्य में उन्होंने समाजवादियों की मदद ली। रंगा आक्सफोर्ड से पढ़ कर आए थे, जयप्रकाश अमेरिका से पढ़े थे, लोहिया जर्मनी से पढ़े थे। ये गाँव में वर्ग-संघर्ष की आँच ज्यादा सह नहीं सकते थे। इन्हें मीडिया में शोहरत की जरूरत थी। सेठों ने इन्हें पैसा, शोहरत दोनों दिया और दिलाया। इनका समाजवाद रोमांसवादी और एडवेंचरिस्ट था। वर्ग-संघर्ष के प्रति ये पूरे प्रतिबद्ध न थे। संपूर्णानन्द, अशोक मेहता कांग्रेस में आजादी के बाद चले गए। अच्युत पटवर्द्धन संन्यासी ऐसा वीतराग हो गए। आचार्य नरेंद्र देव विश्वविद्यालय के कुलपति बन गए। जयप्रकाश सर्वोदय में चले गए। पार्टी अन्ततः बिखर गई।

**सन्दर्भ सूचि**


1. प्रारंभिक भारत का आर्थिक और : रामशरण शर्मा, हिन्दी माध्यम सामाजिक इतिहास कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 2003.
2. बिहार में सामाजिक परिवर्तन के : प्रसन्न कुमार चौधरी, श्रीकान्त, कुछ आयाम वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2001.
3. बिहार में दलित आंदोलन : प्रसन्न कुमार चौधरी, श्रीकांत, (1912-2000) वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2005.
4. भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि: ए.आर. देसाई, मैकमिलन, दिल्ली , 2000.
5. भारत का स्वतंत्रता संघर्ष : बिपिन चंद्र, हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली, 1997.
6. साम्राज्यवाद का उदय और अस्त: अयोध्या सिंह, प्रकाशन संस्थान, दिल्ली, 2002.
7. स्वामी सहजानंद सरस्वती रचनावली, भाग-1-6: (सं.) राघव शरण शर्मा, प्रकाशन संस्थान, दिल्ली, 2003.
8. स्वामी सहजानंद सरस्वती : राघव शरण शर्मा, प्रकाशन विभाग, दिल्ली, 2004.
9. स्वामी सहजानंद सरस्वतीः जीवन झांकी और क्रांतिकारी विचारधारा : त्रिवेणी शर्मा सुधाकर, पीपुल्स बुक हाउस, पटना, 2002.


*Corresponding Author: डॉ० अशोक कुमार